|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 12: भक्तियोग

1/2 (श्लोक 1-10), शनिवार, 25 नवंबर 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/SeGVxUl895U

प्रभु प्राप्ति का मार्ग

हरि नाम सङ्कीर्तन, प्रारम्भिक प्रार्थना और दीप प्रज्वलन के पश्चात् विवेचन सत्र प्रारम्भ हुआ। सम्पूर्ण विश्व में लगभग एक सौ तिहत्तर देशों से करीब आठ लाख लोगों को श्रीमद्भगवद्गीता सिखाने का कार्य ऑनलाइन कक्षाओं के माध्यम से निरन्तर चल रहा है। जिस प्रकार भगवान ने गोवर्धन पर्वत उठाया, उसी प्रकार ये कक्षाएँ निरन्तर उन्हीं की कृपा से चल रही हैं। भगवान ने भक्ति के मार्ग पर चलने के अनेक मार्ग बताए। किस प्रकार योग के द्वारा परमपिता परमेश्वर को प्राप्त कर सकते हैं? जिस प्रकार हमारा कोई मित्र गङ्गा किनारे खड़ा होकर हमसे किसी श्रेष्ठ नाविक का पता या नम्बर पूछता है, लेकिन ठीक तरह से यह नहीं बता पाता है कि वह कौन से किनारे पर खड़ा है? उसी प्रकार भगवान श्री कृष्ण ने भी आने वाले समय में लोगों को भक्ति का मार्ग बताने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता के अट्ठारह अध्यायों में अलग-अलग योग और भक्ति के मार्ग बताए, ताकि वे अपने लक्ष्य तक पहुँच सकें।

यहाँ प्रत्येक अध्याय को अलग-अलग नाम दिए गए। जैसे -
प्रथम अध्याय अर्जुनविषादयोग।
द्वितीय अध्याय साङ्ख्ययोग।
तीसरा अध्याय कर्मयोग।

इस प्रकार सभी प्रकार के योग बताते हुए बारहवें अध्याय में भक्तियोग बताया। बारहवें अध्याय में अर्जुन ने भगवान श्री कृष्ण से प्रश्न पूछे, जो हम सभी के मन में चलते हैं। अर्जुन के अन्यान्य उपकार हैं, हम सभी पर, क्योंकि जो प्रश्न हमारे मन में भी चलते हैं, उन प्रश्नों का शमन भगवान श्रीकृष्ण के श्री मुख से हुआ है। भगवान श्रीकृष्ण के श्री मुख से निकले हुए ये **मन्त्र** - केवल श्लोक नहीं हैं, यह धर्म ग्रन्थ है, जो धर्म की व्याख्या करता है। कर्त्तव्यों की व्याख्या करता है, एकमात्र ऐसा ग्रन्थ है, जिसकी जयन्ती मनाई जाती है। जब मैंने अड़तालीस वर्ष की अवस्था गीता जी को कण्ठस्थ करना प्रारम्भ किया तो मेरे पुत्र ने कहा कि आप इसे याद क्यों कर रहे हैं? गूगल में सर्च करिये। अर्थ सहित सब कुछ मिल जायेगा। मैंने अपने पुत्र से कहा कि क्या तुम्हारी माँ तुम्हें दूध चीनी मिलाकर दे देती है या उसे मिलाती भी है। पुत्र ने कहा कि वह मिला कर देती है, तभी मिठास आती है। मैंने उसे बताया कि बेटा उसी प्रकार नित्य याद करने से, गीता जी की मिठास अनुभव होने लगती है। निरन्तर अध्ययन करने से यह समझ में आने लगता है कि इसके माध्यम से जीवन का तनाव दूर होता है। जीवन जीने का तरीका आता है। जीवन आनन्दमय बन जाता है। यह गुह्यतम शास्त्र है। अर्जुन के हर प्रश्न पर भगवान श्री कृष्ण वेद और उपनिषद रूपी गायों को दुहते हैं। यह सेल्फ़ मैनेजमेंट का सबसे अच्छा ग्रन्थ है

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः ।
पार्थो वत्सः सुधीः भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् ।।

समस्त उपनिषदों को गाय बताया और उनका दोहन करने वाले भगवान श्री कृष्ण हैं। पार्थ अर्थात् अर्जुन बछड़ा बने जिन्होंने उस दुग्ध का पान किया। अर्जुन के कारण यह श्रीमद्भगवद्गीता का अमृत हमें भी प्राप्त हुआ। अर्जुन पहला प्रश्न पूछते हैं। कौन से योगी सर्वश्रेष्ठ होते हैं जो आप के सगुण साकार स्वरूप की पूजा करते हैं? या जो आपके निर्गुण निराकार स्वरूप की पूजा करते हैं?

12.1

अर्जुन उवाच
एवं(म्) सततयुक्ता ये, भक्तास्त्वां(म्) पर्युपासते|
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं (न्), तेषां(ङ्) के योगवित्तमाः||1||

अर्जुन बोले - जो भक्त इस प्रकार (ग्यारवें अध्याय के पचपनवें श्लोक के अनुसार) निरन्तर आप में लगे रहकर आप (सगुण साकार) की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण निराकार की ही (उपासना करते हैं), उन दोनों में से उत्तम योगवेत्ता कौन हैं?

विवेचन - अर्जुन भगवान श्री कृष्ण से पूछते हैं कि जो भक्त इस प्रकार आप में लगे रहकर आप के सगुण, साकार रूप की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण निराकार की ही उपासना करते हैं, उन दोनों में से उत्तम योगवेत्ता कौन हैं? अर्थात् आपके अनुसार कौन से योगी सर्वश्रेष्ठ होते हैं जो आप के सगुण साकार स्वरूप की पूजा करते हैं वो या जो आपके निर्गुण निराकार स्वरूप की पूजा करते हैं वो? इन दोनों में से कौन श्रेष्ठ योगी है? भगवान ने तुरन्त उत्तर दिया कि सगुण उपासना करने वाले श्रेष्ठ योगी कहलाते हैं।

12.2

श्रीभगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां(न्), नित्ययुक्ता उपासते|
श्रद्धया परयोपेता:(स्), ते मे युक्ततमा मताः||2||

श्रीभगवान् बोले - मुझ में मन को लगाकर नित्य-निरन्तर मुझ में लगे हुए जो भक्त परम श्रद्धा से युक्त होकर मेरी (सगुण साकार की) उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण बोले - मुझ में मन को लगाकर नित्य-निरन्तर मुझ में लगे हुए जो भक्त परम श्रद्धा से युक्त होकर, मेरी सगुण साकार की उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

जिस प्रकार एक माँ के दो पुत्रों में से किसी एक पुत्र को ले जाने की बात कही जाए तो माँ अपने बड़े पुत्र को भेजने की बात कहेगी क्योंकि उसे लगता है कि बड़ा पुत्र तो अपनी जिम्मेदारी उठा सकता है लेकिन छोटा पुत्र अभी मेरे ही आश्रित है। इसका आशय यह नहीं है कि माँ को छोटा पुत्र प्रिय है और बड़ा पुत्र प्रिय नहीं है, उसके लिए दोनों समान हैं। इसी प्रकार भगवान उत्तर देते हैं कि छोटा पुत्र अभी मेरे आश्रित है अर्थात् सगुण साकार की उपासना करने वाला अभी मेरे आश्रित है।

12.3, 12.4

ये त्वक्षरमनिर्देश्यम्, अव्यक्तं(म्) पर्युपासते|

सर्वत्रगमचिन्त्यं(ञ्) च, कूटस्थमचलं(न्) ध्रुवम्||3||
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं(म्), सर्वत्र समबुद्धयः|
ते प्राप्नुवन्ति मामेव, सर्वभूतहिते रताः||4||

और जो (अपने) इन्द्रिय समूह को वश में करके चिन्तन में न आने वाले, सब जगह परिपूर्ण, देखने में न आने वाले, निर्विकार, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की तत्परता से उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में प्रीति रखन् वाले (और) सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।
जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि जो अपने इन्द्रिय समूह को भली-भाँति वश में करके, चिन्तन में न आने वाले, कूटस्थ, अचल, ध्रुव, अक्षर और ऐसे अव्यक्त की तत्परता से उपासना करते हैं, वे सब जगह परिपूर्ण, देखने में न आने वाले, निर्विकार, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की तत्परता से उपासना करते हैं। वे प्राणीमात्र के हित में प्रीति रखने वाले और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य भी मुझे ही प्राप्त होते हैं। वह बड़ा पुत्र भी मुझे ही प्राप्त होता है। चाहे निर्गुण की उपासना करें या सगुण की हमें श्रद्धावान तो होना ही होगा। इसीलिए कहा भी है-

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानम्

ज्ञान उसी को प्राप्त होगा जो श्रद्धा का भाव रखेगा। भगवान को जानने से पहले उन्हें मानना पड़ेगा। मानने से ही ज्ञान सम्भव है। **श्रद्धा ही मानना है।** जिस प्रकार हम किसी स्थान का पता पूछते हैं तो सामने वाले को हमें सर्वप्रथम यह बताना होता है कि हम कहाँ खड़े हैं? तभी वह हमें आगे का मार्ग बता पाएगा। उसी प्रकार भक्ति के मार्ग में भी हम कहाँ हैं? हमें यह पता होगा तभी हम आगे बढ़ पायेंगे। भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को भक्ति का सरल और सुगम मार्ग बताया।

12.5

क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम्, अव्यक्तासक्तचेतसाम्|
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं(न्), देहवद्भिरवाप्यते||5||

अव्यक्त में आसक्त चित्त वाले उन साधकों को (अपने साधन में) कष्ट अधिक होता है; क्योंकि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त-विषयक गति कठिनता से प्राप्त की जाती है।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि अव्यक्त में आसक्त चित्त वाले उन साधकों को अपने साधन में कष्ट अधिक होता है; क्योंकि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त-विषयक गति कठिनता से प्राप्त की जाती है। जो **सर्वभूतहिते रता: अर्थात् समस्त भूत प्राणियों में ईश्वर है ऐसा मानते हैं,** वे श्रेष्ठ होते हैं।

जिस प्रकार हम नाग के पञ्चमी दिन नागों की पूजा करते हैं। वट वृक्ष की पूजा करते हैं, गोवर्धन पर्वत की पूजा करते हैं, अनेक वृक्षों जैसे तुलसी, नीम, आँवला आदि की पूजा करते हैं। छठ पूजा के दिन नदियों की पूजा करते हैं अर्थात् वह परमात्मा सभी जगह विद्यमान है और सभी भूत प्राणियों के हित में लगा हुआ है। ईश्वर सभी जगह विद्यमान है यह बात समझ पाना अत्यन्त कठिन है। सगुण ईश्वर की आराधना करने वाले छोटे बालक के समान होते हैं। वे सब कुछ ईश्वर पर डाल देते हैं। इसीलिए भगवान कहते हैं कि मैं सगुण ईश्वर की आराधना करने वाले लोगों की नैया को पार लगाता हूँ।

अब सौंप दिया इस जीवन का,
सब भार तुम्हारे हाथों में,
है जीत तुम्हारे हाथों में,
और हार तुम्हारे हाथों में।

अर्जुन ने अपने रथ की लगाम भगवान श्रीकृष्ण के हाथ में सौंप दी। दूसरे अध्याय में अर्जुन ने कहा भी है-

यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् || 2:7 ||

अर्जुन कहते हैं ऐसी अवस्था में मैं आपसे पूछ रहा हूँ कि जो मेरे लिए श्रेयस्कर हो, उसे निश्चित रूप से बतायें | अब मैं आपका शिष्य हूँ और शरणागत हूँ | कृपया मुझे उपदेश दें |

अर्जुन ने स्वयं को भगवान को सौंप दिया और भगवान श्री कृष्ण को ही ईश्वर स्वरूप मान लिया। सम्पूर्ण महाभारत में जहाँ-जहाँ भगवान श्री कृष्ण कुछ कहते हैं, वहाँ **वासुदेव उवाच** कहा गया है। लेकिन श्रीमद्भगवद्गीता गीता में श्रीकृष्ण जहाँ-जहाँ बोलते हैं, वहाँ **श्रीभगवानुवाच** कहा गया है। अर्थात् अर्जुन ने उन्हें भगवान मान लिया। जब तक मानेगा नहीं, जानेगा कैसे? एक उदाहरण के द्वारा हम इसे और समझते हैं -

एक बार एक भक्त के सपने में भगवान आए और उससे भगवान ने कहा कि आज मैं तुम्हें तुम्हारे जीवन का प्रवास दिखाता हूँ। भगवान ने चलना आरम्भ किया। समुद्र के किनारे मुलायम सी रेत पर जब वे दोनों चल रहे थे तो भगवान ने बताया कि देखो, ये जो दो पदचिह्न दिख रहे हैं, ये तुम्हारे पदचिह्न हैं और जब तुम चल रहे थे तो भगवान का चिन्तन कर रहे थे, इसलिए मैं भी तुम्हारे साथ-साथ तुम्हारे बाजू में तुम्हारा हाथ पकड़ कर चलता था। तुम्हारे बाजू में जो दो और पदचिह्न है वह मेरे पदचिह्न हैं क्योंकि मैं भी तुम्हारे साथ-साथ चल रहा था। भक्त ने कहा कि मुझे पता है आपकी मुझ पर कितनी अधिक कृपा है। मार्ग में आगे बढ़ने पर काँटे प्रारम्भ हो गए। भक्त ने देखा कुछ दूरी पर आगे बढ़ने पर अब केवल दो ही पदचिह्न दिखाई दे रहे हैं। भक्त ने भगवान से कहा कि जबसे काँटे प्रारम्भ हुए, तब से मुझे केवल दो ही पदचिह्न दिखाई दे रहे हैं। आपने मेरा साथ क्यों छोड़ा? तब भगवान ने कहा कि जब से काँटे प्रारम्भ हुए, मैंने तुम्हें गोद में उठा लिया यह तुम्हारे पदचिह्न नहीं मेरे पदचिह्न हैं। आशय है कि भगवान हमारी हर कदम पर रक्षा करते हैं। जब हम देखकर जानते हैं अनुभव करते हैं तो पता चलता है कि भगवान हमारी हर कदम पर रक्षा करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर गोद में भी उठा लेते हैं क्योंकि ऐसे लोग भगवान पर ही पूर्ण रूप से आश्रित हैं। यह सब कुछ बिना श्रद्धा और भक्ति के सम्भव नहीं है।

12.6

ये तु सर्वाणि कर्माणि, मयि सन्न्यस्य मत्पराः|
अनन्येनैव योगेन, मां(न्) ध्यायन्त उपासते||6||

परन्तु जो कर्मों को मेरे अर्पण करके (और) मेरे परायण होकर अनन्य योग (सम्बन्ध) से मेरा ही ध्यान करते हुए (मेरी) उपासना करते हैं।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि परन्तु जो कर्मों को मेरे अर्पण करके और मेरे परायण होकर अनन्य योग सम्बन्ध से मेरा ही ध्यान करते हुए मेरी ही उपासना करते हैं। ऐसे लोगों के विषय में भगवान अगले श्लोक में बताते हैं।

12.7

तेषामहं(म्) समुद्धर्ता, मृत्युसंसारसागरात्|
भवामि नचिरात्पार्थ, मय्यावेशितचेतसाम्||7||

हे पार्थ ! मुझ में आविष्ट चित्त वाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि हे पार्थ ! मुझ में आविष्ट चित्त वाले उन भक्तों का मैं स्वयं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ। मैं उसे अपनी गोद में बैठा लेता हूँ और उसकी नैया पार करता हूँ। जिस प्रकार माँ छोटे बच्चे को रोते ही दूध पिलाती है। स्वयं गीले में सोकर, बच्चे को सूखे में सुलाती है। लेकिन इन सभी के लिए कुछ निश्चित

नियम हैं। वे कौन से नियम है? आगे जानते हैं।

12.8

मय्येव मन आधत्स्व, मयि बुद्धिं(न्) निवेशय|
निवसिष्यसि मय्येव, अत ऊर्ध्वं(न्) न संशयः||8||

(तू) मुझ में मन को स्थापन कर (और) मुझ में ही बुद्धि को प्रविष्ट कर; इसके बाद (तू) मुझ में ही निवास करेगा (इसमें) संशय नहीं है।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि मुझमें मन को स्थापित कर और मुझ में ही बुद्धि को प्रविष्ट कर। इसके बाद तू मुझ में ही निवास करेगा इसमें संशय नहीं है। जो सुबह उठते ही मुझे याद करता है फोटो को देखकर प्रणाम करता है। जिस प्रकार छोटा बालक पूरे दिन माँ को ही अपने हृदय में रखता है और माँ भी पूर्ण रूप से हर समय अपने सन्तान को ही याद करती है। मन तो मान लेता है लेकिन बुद्धि तर्क करती है। बुद्धि प्रश्न करती है। दोनों का एक साथ अर्पित होना ही ईश्वर प्राप्ति का सहायक होता है।

एक बार चूरु जिले के सरदार शहर में स्वामी रामशरण दास जी महाराज ने अपने गुरु शरणानन्द जी महाराज की एक घटना बताई। वे प्रज्ञा चक्षु थे अर्थात् जन्म से अन्धे थे। शरणानन्द जी महाराज एक बार अपने शिष्यों के साथ जा रहे थे। वे देख नहीं सकते थे। चलते-चलते वह एक पेड़ के नीचे जाकर रुक गए और एक पत्थर को उठाकर उसे प्यार से सहलाने लगे। थोड़ी देर बाद उठकर बोले, यहीं रहना मैं कल फिर आऊँगा। अगले दिन फिर वह अपने शिष्यों के साथ उसी पेड़ के नीचे जाकर बैठ गए और उसी पत्थर को फिर से हाथ में उठाकर उसे सहलाने लगे। यह देखकर एक शिष्य को बड़ा अचम्भा हुआ और उसने सोचा कि यह कैसे सम्भव हो सकता है। जब यह देख नहीं सकते, तो यहाँ कैसे पहुँचे? जरूर इन्होंने अपने पग गिन लिए होंगे। उन्होंने रास्ता याद कर लिया था, इसलिए दूसरे दिन भी आकर इन्होंने इसी पत्थर को उठाया है। जब शरणानन्द जी उठने लगे तो उन्होंने उस पत्थर से फिर कहा कि मैं कल आऊँगा, मेरी प्रतीक्षा करना। यह कहकर उन्होंने उस पत्थर को वापस उसी स्थान पर रख दिया, परन्तु वह जो संशय युक्त शिष्य था उसने उस पत्थर को उठाकर पचास कदम आगे जाकर सीधे हाथ की तरफ एक पेड़ के नीचे फेंक दिया और सोचने लगा कि अब देखते हैं कि कल क्या होता है। अब कल गुरुजी जब यहाँ आएँगे तो उन्हें यह पत्थर यहाँ नहीं मिलेगा। अगले दिन शरणानन्द महाराज निकले और उस पेड़ से पचास कदम चलकर दूसरे पेड़ के नीचे जा कर उसी पत्थर को उठाया और उस पर हाथ रख कर बोले अरे! तू यहाँ कैसे आ गया, तेरे पैर लग गए क्या? उन्होंने उसी पत्थर को उठा लिया। यह देखकर वह शिष्य अचम्भित हो गया। वह गुरु के सामने नतमस्तक हो गया और साष्टाङ्ग प्रणाम करके बोला कि गुरुजी ये पत्थर मैंने यहाँ पर उठा कर रखा था, परन्तु कृपा करके बताइए कि यह कैसे घटित हुआ। इस पर शरणानन्द महाराज ने कहा कि हर पत्थर में चेतना होती है, हर एक में चेतना होती है। आप अगर हृदय से आवाज दो तो वह चेतना जागने लगती है, इसलिए पत्थरों से मूर्ति बनती है और जब भक्तों की चेतना उसमें जाती है तो उसमें जागृति आ जाती है और वह मूर्ति भी जीवित हो उठती है। हमारे यहाँ पण्ढरपुर के विठोबा की सवारी में लोग पैदल चलते हैं और पण्ढरपुर पहुँच के विट्ठल के चरणों को अपने अश्रु से भिगो देते हैं तो सोचिए कि उस विट्ठल के चरणों में कितनी चेतना जाग गई होगी। इस प्रकार जब मन और बुद्धि एक हो जाएँगे तब ऐसी घटना घटेगी। इन सबके लिए श्रद्धा की आवश्यकता है।

शबरी अपनी बाल्यावस्था में ही मतङ्ग ऋषि के आश्रम में पहुँच गई थी। उसका कारण यह था कि उसकी शादी के लिए उसके पिता ने मेमने पाल रखे थे। एक दिन शबरी मेमनों के साथ खेल रही थी। उसके पिता ने कहा कि खेल ले जब तक खेलना है, जब तेरा विवाह होगा तो यह सब काट के पका दिए जायेंगे। यह सुनकर शबरी रात भर सो नहीं पाई और रात में ही घर से भाग गई। सुबह जब पता चला कि शबरी घर पर नहीं है तो उसको ढूँढने के लिए उसके पिता ने आदमी भेजे। लोगों को आता देखकर शबरी एक पेड़ पर चढ़ गई। दिन भर पेड़ पर रही और रात को दौड़ने लग गई। इस प्रकार वह दिन में तो पेड़ पर चढ़ जाती और रात को दौड़ती। इस प्रकार करते-करते एक दिन वह एक आश्रम के पास पहुँच गई। वहाँ उसने अत्यन्त सात्त्विक ऋषियों को देखा। आश्रम के गुरु मतङ्ग ऋषि ने उसे आश्रम में रहने की अनुमति दे दी।शबरी के मन में मेमनों के प्रति भी प्रेम भाव था, **सर्वभूतहिते रताः,** वह सभी का कल्याण चाहती थी।

एक दिन ऋषि मतङ्ग ने कह दिया कि आज मेरा जाने का दिन आ गया है, जिसको जो भी प्रश्न पूछने हो, वह पूछ ले। सभी शिष्य अपने-अपने प्रश्न पूछने लगे परन्तु शबरी तो बहुत छोटी थी। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि मैं क्या पूछूँ, जब उसका अवसर आया तो वह बोली आप कहाँ जा रहे हैं? क्या आप कभी नहीं आएँगे? मुझे सिर्फ यह बता दीजिए कि भगवान कहाँ मिलेंगे? क्या वह मुझे कभी मिलेंगे भी या नहीं ?

मतङ्ग ऋषि ने कहा, भगवान तुझे मिलने यहीं आएँगे, तू उनकी प्रतीक्षा करती रहना और तब से शबरी भगवान की प्रतीक्षा करने लगी। मतङ्ग ऋषि के स्वर्गवास के बाद सभी शिष्य इधर-उधर चले गए परन्तु शबरी उसी आश्रम में ही रही। रोज भगवान की प्रतीक्षा करती और कहती कि मेरे राम आएँगे। पूरब की दिशा में झाड़ू लगाती। एक दिन उसे समझ आया, क्या पता भगवान पश्चिम से आएँ या दक्षिण से या उत्तर से आ जाएँ और तब से उसने चारों दिशाओं में साफ सफाई करनी शुरू कर दी। शबरी रोज नदी पर जाती और जल लेकर आती कि मेरे राम आएँगे। वह अपना अस्तित्व ही भूल गई। वह नित्य जल लाती और बेर आदि फल ला कर रखती। उन्हें चख भी लेती कि कहीं कोई फल खराब न हो। इस प्रकार करते-करते शबरी बूढी हो गई परन्तु उसे विश्वास था कि मेरे गुरु जी ने कहा है कि श्रीराम आएँगे, तो वे जरूर आएँगे। नित्य पुष्प ला कर रखती थीं कि मेरे राम आएँगे। वह रात को सोती भी नहीं थी। उसे लगता था कि कहीं ऐसा न हो कि राम रात में आ जायें और मैं सोती ही रह जाऊँ। शबरी न तो सोई और न ही उसका विश्वास कम हुआ। यह भक्तियोग का शिखर है। जब श्रीराम आए तो शबरी की आँखों से आँसू बहने लगे। वह जब भगवान के चरण धोने के लिए जल लेने गई तो श्रीराम ने कहा कि शबरी तेरा काम तो हो गया। तूने अपने आँसुओं से मेरे चरण पहले ही धो दिए हैं।

इस प्रकार भगवान ने शबरी का उद्धार किया।
भगवान ने शबरी को नवधा भक्ति सिखाई। यह वनवासियों के लिए सिखाई गई थी। शबरी को इस नवधा भक्ति की शिक्षा उसको दिया जाने वाला मानपत्र है। भगवान कृपालु है और भाव के भूखे हैं। हमें भी बहिरङ्ग से अन्तःरङ्ग योग की ओर बढ़ना है।

12.9

अथ चित्तं(म्) समाधातुं(न्), न शक्नोषि मयि स्थिरम्|
अभ्यासयोगेन ततो, मामिच्छाप्तुं(न्) धनञ्जय||9||

अगर (तू) मन को मुझ में अचल भाव से स्थिर (अर्पण) करने में अपने को समर्थ नहीं मानता, तो हे धनञ्जय ! अभ्यास योग के द्वारा (तू) मेरी प्राप्ति की इच्छा कर।

विवेचन - भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि अगर तू मन को मुझ में अचल भाव से स्थिर, अर्पण करने में अपने को समर्थ नहीं मानता, तो हे धनञ्जय! अभ्यास योग के द्वारा तू मेरी प्राप्ति की इच्छा कर। हे धनञ्जय! जिस प्रकार तुमने धन कमाया। (अर्जुन ने अपनी इन्द्रप्रस्थ नगरी को बसाने के लिए अनेक राजाओं से धन कमाया था। इसलिये उन्हें धनञ्जय कहा गया।) धन प्राप्त करने की भाँति ही अभ्यास से तुम मुझे भी प्राप्त कर सकते हो।
इसी प्रकार गीता को पढ़ना, पढ़ाना और जीवन में लाना अति आवश्यक है। निरन्तर गीता का अभ्यास करें।
भगवान आदि शङ्कराचार्य ने कहा है-

आत्मा त्वं गिरिजा मतिः सहचराः प्राणाः शरीरं गृहं ।
पूजा ते विषयोपभोगरचना निद्रा समाधिस्थितिः ।।
सञ्चारः पदयोः प्रदक्षिणविधिः स्तोत्राणि सर्वा गिरो ।
यद्यत्कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ।। 4

हे शम्भो ! आप मेरी आत्मा हैं, माँ भवानी मेरी बुद्धि हैं, मेरी इन्द्रियाँ आपके गण हैं एवं मेरा शरीर आपका गृह है। सम्पूर्ण विषय-भोगों की रचना आपकी ही पूजा है। मेरी निद्रा की स्थिति समाधि स्थिति है, मेरा चलना आपकी ही परिक्रमा, प्रदक्षिणा है, मेरे

शब्द आपके ही स्तोत्र हैं । वस्तुतः मैं जो भी करता हूँ, वह सब आपकी आराधना ही है अर्थात् हमारे समस्त कर्म ईश्वर को समर्पित हो जाएँ हम जो भी कार्य करें अभी केवल ईश्वर को ही अर्पित हों।

12.10

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि, मत्कर्मपरमो भव|
मदर्थमपि कर्माणि, कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि||10||

(अगर तू) अभ्यास (योग) में भी (अपने को) असमर्थ (पाता) है, (तो) मेरे लिये कर्म करने के परायण हो जा। मेरे लिये कर्मों को करता हुआ भी (तू) सिद्धि को प्राप्त हो जायगा।

विवेचन - भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! अगर तुम अभ्यास, योग में भी अपने को असमर्थ पाते हो, तो मेरे लिये कर्म करने के परायण हो जाओ। मेरे लिये कर्मों को करते हुए भी तुम सिद्धि को प्राप्त हो जाओगे। अपने कर्मों को करते तुम मेरी ही भक्ति कर रहे हो, यह बात मन में रखते हुए कर्म करोगे, तो निश्चित रूप से मुझे ही प्राप्त हो जाओगे और समस्त सिद्धियों को प्राप्त कर लोगे। किसी की बात सुन रहे हो तो मेरा ही गुणगान चल रहा है, ऐसा समझ लेना। मेरे लिये काम करके ही तू योगी बन जायेगा।

जीवों का कलरव जो,
दिनभर सुनने में मेरे आवे,
तेरा ही गुणगान जान,
मन प्रमुदित हो अति सुख पावे।

तू ही है सर्वत्र व्याप्त हरि,
तुझमें सारा यह संसार,
इसी भावना से अंतर भर,
मिलूँ सभी से तुझे निहार।

प्रतिपल निज इन्द्रिय समूह से,
जो कुछ भी आचार करूँ,
केवल तुझे रिझाने को बस,
तेरा ही व्यवहार करूँ।

हे ईश्वर! मैं समस्त कार्य आपके लिए ही कर रहा हूँ। मेरे पेट भरने का कार्य भी यह भाव बन जाए कि मैं आपका ही हवन कर रहा हूँ। हम हमारे समस्त कर्म ईश्वर को समर्पित कर दें।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता :-बजरङ्ग भैया

प्रश्न:- मैंने एक स्थान पर सुना कि भगवान को एक स्थान पर ज्योति स्वरूप परमात्मा को मानो सर्वव्यापी मत मानो और आत्मा में भी वही गुण मानो जो भगवान में हैं। सत्य क्या मानें?

उत्तर:- आप जो कह रहे हैं वह सत्य है परन्तु आप को यह देखना है कि आप कहाँ खड़े हैं? आपका स्वभाव क्या है? एवरेस्ट पर चढ़ाई करने के लिये अनेक साधनों से ज़ाया जा सकता है। किन्तु देखना यह है कि आप खड़े कहाँ हैं? निर्गुण निराकार का मार्ग अत्यन्त दुष्कर है। जिस बुद्धिमान मनीषी ने इस मार्ग से ईश्वर को पाया, उसे लगता है कि यही मार्ग है। भगवान ने इसी अध्याय में बताया कि भगवान की प्राप्ति के अनेक मार्ग है। भगवान ने बताया कि सरल मार्ग कौन सा है। भगवान ने बताया कि ईश्वर तक भक्ति योग, कर्म योग, ध्यान योग, से भी पहुँचा जा सकता है। एक मार्ग पर चलना होता है शेष मार्ग स्वयं ही खुलते जाते हैं। एक नाव पर

चलना होता है, हम दो नावों पर पैर रख कर नहीं चल सकते। दो नावों पर पैर रख कर चलने वाला निश्चित ही गिरेगा। अत: एक मार्ग- सगुण या निर्गुण पर चलना ही श्रेयस्कर होगा।

प्रश्नकर्ता:- योगेश भैया

प्रश्न:- आजकल बहुत से सामाजिक पार्टियों या वैवाहिक कार्यक्रमों में आमन्त्रित करते हैं, हम वहाँ जायें या नहीं? क्योंकि हम ऐसे आयोजनों से दूर रहना चाहते हैं।

उत्तर:- किसी से भी दूरी बनाने की आवश्यकता नहीं है। **सर्वभूतहिते रता:।** ऐसे स्थान पर ज्ञानी अज्ञानी सभी आयेंगे, उन सबको स्नेह देना आपका काम है। आप वहाँ पर अपनी इच्छानुसार खान पान कर सकते हैं।कोई व्यक्ति बुरा नहीं होता, हो सकता है उसका मार्ग बुरा है। हमें तो सबको स्नेह देना है। हो सकता है कि आप के साथ चलते चलते वह सन्मार्ग पर चलना सीख जाये, इसलिये कोई भी त्याज्य नहीं है।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।

निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी।।12:13।।

सबके लिये प्रेम का भाव द्वेष का भाव किसी के प्रति न हो। मैत्री और करुणा का भाव सबके लिये हो। आज पृथ्वी पर इतना पाप है किन्तु हम पृथ्वी तो नहीं छोड़ सकते इसलिये ग़लत कार्य में संलग्न लोगों से सजग रहें श्री भगवद्गीता भागो नहीं कहती, वह जागो का सन्देश देती है। हम सब के लिये समत्त्व का भाव रखें।

प्रश्नकर्ता:- शुभदा दीदी

प्रश्न:- यदि हमें भवसागर पार करना है तो हमें एक ही मार्ग का चयन करना है सगुण या निर्गुण, किन्तु हम जो यह विभिन्न स्तरों पर सांसारिक कार्य करते हैं, उनके साथ भक्ति से कैसे सामञ्जस्य करें?

उत्तर:- यदि भगवान से सम्बन्धित कार्य है तो पूरी श्रद्धा के साथ जो भी कार्य कर रहे हैं, उसका फल भगवान को अर्पण करके करें तो बाद में किसी तरह की पीड़ा नहीं होती, लेकिन नित्य प्रति के कामों में बुद्धि की स्थिरता बहुत महत्वपूर्ण होती है। बुद्धि की स्थिरता प्राप्त करने के लिए द्वितीय अध्याय के अन्तिम दस बारह श्लोकों में यह वर्णित है- **तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठित** प्रज्ञा को कैसे प्रतिष्ठित करें यह बात बताई गई है।

भगवान ने कहा कि श्री गीता योग शास्त्र है, मैं ज्ञान की भी बात करूँगा और विज्ञान की भी बात करूँगा।

ज्ञान तो सदा के लिये है, विज्ञान परिवर्तनशील है। ज्ञान एवम् विज्ञान में अन्तर समझना, इस मार्ग पर निर्णय लेते समय हमारी बुद्धि को कैसे प्रतिष्ठित करना हमारे मन बुद्धि और शरीर में कैसे तादात्म्य स्थापित करना यह योग सिखाता है, योग का तात्पर्य ही है जोड़ना है। मन और बुद्धि को जोड़ना। मन और बुद्धि एक साथ कार्य में लग जायेगे तो विजय की प्राप्ति निश्चित है। एक विद्यार्थी कक्षा में बैठ कर अध्ययन तो कर रहा है, किन्तु उसका मन अन्यत्र भटक रहा है तो वह कुछ भी सीख नहीं सकेगा। मन बुद्धि को एकसाथ कैसे लायें? इसके लिये श्री गीता में अनेक विधायें हैं, आगे हम इनका अध्ययन करेंगे।

प्रश्नकर्ता:- रचना दीदी

प्रश्न:- क्या गुरु बनाना आवश्यक है? या हम इष्ट की आराधना से ही मार्ग प्राप्त कर सकते हैं?

उत्तर:- जैसे रसोई बनाना जब आपने प्रारम्भ किया तो घर के किसी अनुभवी ने आपका मार्गदर्शन किया तो आप शीघ्र ही वह कार्य

सीख जाती हैं और आप पाक कला अच्छी तरह से सीख जाती हैं। गुरु बहुत आगे पहुँचे हुये हैं, अध्यात्म के मार्ग में जो भी कठिनाइयाँ आयेंगी, उन्हें वे बता देते है, निराकरण कर देते हैं, जिससे हमारा समय बच जाता है, गुरु अनेक जन्मों के अनुभवों से मार्गदर्शन करता है, उसे पता है कि हम खड़े कहाँ हैं? अत: वह हमें उचित मार्ग बताता है। सनातन संस्कृति में गुरु की अनिवार्यता बताई गयी है। आजकल इतने प्रकार के गुरु हैं कि सच्चे गुरु को खोज पाना ही दुष्कर है। किन्तु इसके लिये चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है, वह समय अपने समयानुसार स्वयं ही आयेगा। गुरु स्वयं ही अपने शिष्य को खोज लेता है। विवेक को हमेंशा ही जागृत रखना होगा।

प्रश्नकर्ता:- विकेन्द्र भैया

प्रश्न:- हमने गीता जी का पठन बारहवें अध्याय से क्यों प्रारम्भ किया?

उत्तर:- बारहवें अध्याय से प्रारम्भ करने का पहला कारण यह है कि यह सबसे छोटा अध्याय है, इसमें बीस श्लोक है। यह एक सरल अध्याय है। इसके शब्द छोटे विच्छेद कर के पढ़ने से स्वतः ही समझ में आ जाते हैं। सरलता से समझ में आने के कारण लोग इससे विमुख नहीं होते, उनमें आगे पढ़ने की जिज्ञासा बढ़ जाती है। दूसरा कारण यह है कि यह बहुत भावगर्भित अध्याय है समझने के लिये एवम् आचरण करने में सुगम है। इसलिये गुरुजी ने यह बताया कि पहले बारहवाँ, फिर पन्द्रहवाँ एवम् उसके बाद सोलहवाँ अध्याय पढ़ाना है,

जिसके कारण छः वर्ष की आयु से लेकर पचासी वर्ष की आयु तक के हज़ारों लोगों ने गीता के अट्ठारह अध्याय कण्ठस्थ कर लिये।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||